भावुक

राय कृष्णदास

१९८५

प्रकाशक—
भारती-भण्डार
बनारस सिटी

प्रथम संस्करण
मूल्य ॥)

मुद्रक—
माधव विष्णु पराड़कर
ज्ञानमण्डल यन्त्रालय, काशी।

दो शब्द

भावुक में संगृहीत रचनाओं में से अधिकांश इंदु (१९१२—'१४) सरस्वती ('१७—'१८) प्रतिभा ('१७—'१८) और माधुरी ('२३—'२७) के द्वारा हिन्दी-प्रेमियों के सामने आ चुकी हैं, अतएव लेखक इस संग्रह की आवश्यकता न समझता था। किन्तु कई मित्रों ने उन्हें इस रूप में देखना चाहा और उनका अनुरोध टाला न जा सका।

इसके सिवा इन पद्यों में से कतिपय गेय हैं। ऐसे निबन्धों को मेरे सुहृत् मुनीम लक्ष्मणदास जी ने—संगीत प्रेमियों को जिनका परिचय कराने की कोई आवश्यकता नहीं—स्वर से विभूषित कर दिया है। उनकी ये बन्दिशें बहुत ही सुन्दर और मार्मिक हुई हैं। संगीत प्रेमियों को इनसे वंचित रखना निस्सन्देह अन्याय होता। इस निहोरे भी यह संग्रह निकालना पड़ा। मुझे विश्वास है कि मुनीम जी की तबीयतदारी में भावुक अवश्य मनोरंजन की सामग्री पावेंगे।

शांति-कुटीर, काशी।
माघ शुक्ल ६, १९८४

कृष्णदास

भेंट

प्रिय मित्र

पण्डित केशवप्रसाद मिश्र

को

सर्वदेवनमस्कारः केशवं प्रति गच्छति

सूची

श्रीहरि

प्रस्ताव

भावुक, निज पद-पद्म के मधु से अब भरपूर
दो ये आँखें आँजने, तिमिर-जाल हो दूर
तिमिर-जाल हो दूर, द्वन्द्व-दर्शन मिट जावें
दिव्य-दृष्टि द्रुत मिले, शान्ति शीतलता आवे
मेरे भाव-मधुकरों ने वह मधु सञ्चित करके कबसे
स्निग्ध हृदय के छाते में है रक्खा अति रक्षित सबसे
आज बस हो उसका उपयोग
नष्ट हो नष्ट-दृष्टि का रोग

१९१८

१

स्वेच्छाचार

मेरी इच्छा पर मत छोड़ो तुम हे मालाकार, मुझे
आओ और बनाओ अपनी इच्छा के अनुसार मुझे

काट-छाँट या कतरब्योंत से मिलता है अति कष्ट मुझे
होता है सन्देह साथ ही करते हो तुम नष्ट मुझे
किन्तु नहीं होने देते हो उचित वृद्धि से भ्रष्ट मुझे
देख अन्य तरु धन्य तुम्हारे होता है सुस्पष्ट मुझे

भ्रम वश, निर्मम हाय तुम्हारा लगता है व्यवहार मुझे
मेरी इच्छा पर मत छोड़ो तुम हे मालाकार, मुझे

१९२३

तुम्हारी ज्योत्स्ना

इस चकोर ने चन्द्र! तुम्हारी
छटा निरख ली है जबसे
भूल गया है और सभी कुछ
तव अनन्य जन यह तबसे

अंगारे चुँगता है देखो
तिस पर भी है नाच रहा
उसमें भी इसने ज्योत्स्नाकर,
पाई तेरी झलक अहा

१९२२

उद्बोधन

हे राजहंस, यह कौन चाल ?

तू पिञ्जर-बद्ध चला होने, बनने अपना ही आप काल

यह है कञ्चन का बना हुआ

तू इससे मोहितमना हुआ

कनकाब्ज-प्रसवि मानस भी है, उसको विस्मृत मत कर मराल

यदि तू इसमें बँध गया कहीं

तो दुःखो का कुछ अन्त नहीं

मत पड़ इस मृग-मरीचिका में, हाँ चेत, तोड़ दे जटिल जाल

उन कमलों पर हो मोहित तू

ले उनकी सुरभि अपरिमित तू

उनके मरन्द-मधु से छक के अपने कुल का व्रत नित्य पाल

१९१८

मधुर-पीड़ा

वीणे ! विपञ्ची ! मधुर पीड़ा क्या इसी का नाम है
टुक बोल दे ।
हे पञ्जरित-तन्वी ! सुकण्ठी, मौन का क्या काम है
मुँह खोल दे ॥
मेरी उँगलियाँ मींड़ लेते यन्त्रणा से मर रहीं !
आः कट रहीं ।
फिर भी तुझे क्यों छेड़ने का कष्ट ये हैं कर रहीं
हट सट रहीं ॥

१९२२

तरंगिणी

उज्ज्वल हिम का रम्य रूप तज कर गलती है
जन्म-भूमि को छोड़ शीघ्रता से चलती है।
अचल-पिता का सभी प्रेम पीछे रहता है
करके वह पाषाण-हृदय सब कुछ सहता है
पड़ता जो कुछ मार्ग में
करती मटियामेट है
किससे करने जा रही
तू तरंगिणी! भेंट है?

होकर पथ में प्रणत तुझे पादप समझाते
उस कुचाल (!) के लिये असंख्य थपेड़े खाते
यदि करते हठ अधिक समूल उखाड़े जाते
करने का उत्साह-भंग यों फल हैं पाते
किसका है सामर्थ्य जो
रोक सके क्षण मात्र, हाँ
भीमकाय गिरि-खण्ड तक
किये गये कणमात्र, हाँ।

होकर पंकिल कुटिल जटिल फेनिल बहती है
हाय प्रति क्षण आप अधोगति ही लहती है
पर चिन्ता कुछ नहीं, अहो लहराती रहती
किसकी आशा किये प्रणय से गाती रहती
रखती है शीतल हृदय
सबका हरती ताप है
हाँ, सैकत-मरुबन्धु-की
तृषा बुझाती आप है।

जिसे न कुछ भी ध्यान कि तुझसे कौन तरलता
उसे मान कर सरस जनों की सहज सरलता
तुझको निज निःसीम हृदय में जो रख लेगा
भर देगा लावण्य, मोतियों से सज देगा
उस रत्नाकर से अहो
जो तुझको अपनायगा।
प्रेम-पाश मे बाँध के
मर्यादा में लायगा।

१९२२

परिग्रह

तव निवास है सीप ! अतल तल मे सागर के
है प्रवाल के विपुल जाल भूपक जिस घर के
पर है तेरा स्नेह दूर गगनस्थित घन से
स्थिति से क्या, वह मिला हुआ है तेरे मन से
उसके लिये निवास छोड़ देती तू अपना
ऊपर आती मग्न-भाव-सुख को कर सपना
अतल निवासिनि, हृदय खोल जल पर तिरती है
मारी मारी तरल तरङ्गो मे फिरती है
प्रेम-नीर की झड़ी लगा देता नव घन है
छक जाता पर एक बूँद से तेरा मन है
इस सुख से हो मत्त किंतु क्या तू गृह तजती ?
नहीं, नहीं, फिर लौट उसे मोती से सजती ।

१९१७

अहोभाग्य

क्या यह न्योता तेरा है ?
प्रेम-निमन्त्रण मेरा है ?
इसकी अवहेला क्या मुझसे
हो सकती है भला कभी ?
गाओ, सब मङ्गल गाओ,
सुमनाञ्जलियाँ बरसाओ;
यह मेरा अति अहोभाग्य है
हुई नाथ की कृपा तभी ॥
सब कामों को छोड़ूँगा,
पर न यहाँ मुँह मोड़ूँगा,
क्योंकि चरण-सेवा तेरी है
इस जीवन की साध सभी ।
इच्छा के गिरि गिरा गिरा,
कर निज मार्ग प्रशस्त निरा;
प्राणेश्वर के पद-पद्मो में
पहुँचा बस मैं अभी अभी ॥

१९१७

सम्बन्ध

मैं इस झरने के निर्झर में
प्रियवर, सुनती हूँ वह गान
कौन गान ? जिसकी तानों से
परिपूरित हैं मेरे प्राण
कौन प्राण ? जिनको निशि-वासर
रहता एक तुम्हारा ध्यान
कौन ध्यान ? जीवन-सरसिज को
जो सदैव रखता अम्लान

१९१६

प्रदीप

अस्तित्व था, जीवन न था इस तूल में;
होती कहाँ स्थिति भी अतः,
यह शून्य और इतस्ततः,
उच्छिन्न-सा था उड़ रहा वातूल में

ऊपर उठा, तब भी रहा पर-वश निरा,
वह था नितांत निपात ही,
अवलम्ब था, बस, वात ही,
यह हो सका न स्वयं खड़ा तक, जब गिरा

सौभाग्य था—यह एक दिन संयोग से;
उड़ कर पवन के साथ में,
आया तुम्हारे हाथ में,
इसको मिली तब मुक्ति उस भव-भोग से

आकर तुम्हारे हाथ, बस, यह बच गया·
यह बार बार बटा गया,
वह भी तुम्हारी थी दया,
फिर यह तुम्हारे स्नेह-रस से रच गया

माना कि यह मृत्पात्र मे स्थापित हुआ,
पर उच्च इसका स्थान है,
क्या ही सरस सम्मान है,
तुमसे प्रबोधित और यह ज्ञापित हुआ

आलोक ऐसा अंत मे इसको मिला,
जो उस समय वितरित हुआ,
जब सूर्य अंतर्हित हुआ,
क्या और भी कोई कभी ऐसा खिला ?

जलता हुआ भी आज यह कृतकृत्य है,
आकर शलभ तक गेह में,
जलते स्वयं हैं स्नेह मे.
शिक्षक नहीं, यह पथ-प्रदर्शक भृत्य है

करता अभी तक वात इस पर चोट है,
पर अब उसे यह क्यो डरै ?
क्यो सिर हिला न घृणा करै ?
अंचल तुम्हारा और इसकी ओट है

१९२३

क्षुद्र का महत्व

क्षणिक क्षणों का मोल, बता दूँ, कब जाना था ?
उन्हें युगों से अधिक कहाँ मैंने माना था ?
करती थी प्राणेश ! प्रतीक्षा जब कुञ्जों में
चौंकाता था वायु मुझे जब तरु-पुंजों में
धड़क-धड़क कर हृदय लगाये था प्रिय-रटना
अद्रि-सदृश था मुझे एक ही क्षण का कटना
तब समझी, यह वस्तु नहीं है खो देने की
है स्वकार्य्य के अर्थ यत्न से रख लेने की

१९१७

अनायास

मुझे जगाया बन्दी भ्रमरों ने जब पद्म-निगड़ से छूट
प्राणेश्वर की ओर चली मैं, नेह लगा था परम अटूट
छोड़ी नाव, प्रभात-पवन ने दिया मुझे दूना उत्साह
उस सरिता के सदृश हृदय के थे मेरे भी भाव अथाह
जब मैं पहुँची बीच धार में सहसा चला प्रभञ्जन घोर
वह छोटी-सी नदी क्षुब्ध हो करने लगी सिन्धु-सा रोर
चिन्ता हुई मुझे फिरने की, मैंने लौटाई निज नाव
क्या इस डर से—यहीं डूब कर हो जावे न जीवनाभाव?
नहीं, नहीं, यह बात नहीं थी, था प्रियतम-सम्मिलन निदान
ममता कहाँ प्राण पर, उसको करके प्रिय-चरणों में दान?
इसी समय पड़ गई भँवर में मेरी नाव अचानक हाय!
मैं क्या करती हुई मूढ़-सी, कोई सूझ न पड़ा उपाय
उधर पवन अवसर पा उसको बहा ले चला अपने साथ
आँखें मूँद रह गई अक्रिय मैं बस धरे हाथ पर हाथ
अकस्मात तरणी टकराई, हुआ आपही नयन-विकास
ऐं, आ लगी अपर तट पर यह! पाया प्रिय को बिना प्रयास!

१९१७

कारण

, (मत्त सर्व प्रवर्तते)

सागर की अनन्त लहरों से मुझसे बातें होती थीं
रजत-हास्य हँस-हँस कर मेरा सब विषाद वे खोती थीं
नभ-मण्डल की तारावलियाँ होकर मौन गुना करतीं
अर्थ समझती हों कि नहीं, पर हो एकाग्र सुना करतीं
वेला पर फैलातीं अपना मंजुल मृदुल प्रकाश
खेला करती थीं सागर से, करती तम का नाश

मै सुनते-सुनते सो जाता दिनकर मुझे जगाता था
निशि-चर्य्या को भूल-भाल मैं कामों मे लग जाता था
फिर जब सुखदा संध्या आके अपने मेंहदी-रंजित-कर
नभ तक लेजा के, फैलाती रजनि यवनिका श्यामलतर
किन्तु अचानक चन्द्र कही से आ जाता चुपचाप
व्रीड़ा-विवश नवोढ़ा संध्या छिप जाती थी आप

तब मैं पर्वत पर जाता था, निभृत निकुञ्ज शिखर पर था
चिन्ता व्यथा सभी से पर था, हाँ, वनदेवी का घर था
वहाँ देव-तरुवर मर्मर करके, निर्झर झर्झर कर-कर के
घन घर्घर कर स्वागत करते मेरा सारा श्रम हर के
उनसे मेरा होता रहता बड़ी देर आलाप
श्रुति सम्पुट मे तत्व सुधारस घोल मेटते ताप

जीवन-चर्या यही नित्य थी, था इसका क्रम सुखद अभंग
उन्ही सखाओं की संगति से पाता मैं निःसङ्गति-सङ्ग
स्वप्न लोक-सी सुखमा उनकी, कभी न वे दिन भूलेंगे
नभ पर अस्त दिनेश-विभा-से हृदय-पटल पर झूलेंगे
उन आलापों का क्या कोई पा सकता है पार ?
पर 'मेरे कारण तुम हो' बस था यह सब का सार

१९२२

रूपान्तर

इन्द्रनील-सा नीर जलद बनता है जैसे
नभ में विश्व-वितान-तुल्य तनता है जैसे
फिर मुक्ता-सम बिन्दु-रूप में वर्षित होता
और सृष्टि का हृदय हरा हो हर्षित होता
उसी भाँति मेरा प्रणय
हृदय-पटल बन कर अहा
गल-गल कर दृग-नीर बन
अहो-रात्र है झर रहा

१९१७

उपचार

भाव-हीन क्यों हृदय हमारा हाय ! हाय ! हो गया कहो ?
शुष्क हृदय होने से अच्छा तो है यही कि हृदय न हो
अब भी वैसे रंग-बिरंगे बादल नभ में घिरते हैं
चित्रित, चारु झूल से सज्जित मत्त द्विरद-से फिरते हैं
अब भी उड़ती हुई बकाली नीले घन मे भाती है
विष्णु-वक्ष पर सित सरोज की माला ज्यों लहराती है
शशि से वह पद छीन 'सुधाकर' जलधर को करने वाली
मोती-सी बूँदे पड़ती हैं अब भी मन हरने वाली
अब भी मन्द पवन चलता है वर्षा-जल में करके स्नान
लगा केतकी-रज को तन में इठलाता होकर अम्लान
अब भी हरियाली होती है, वन में बनते नये निकुञ्ज
वनदेवी के केलिस्थल-से, कोमलता, सुखमा के पुञ्ज
वर्षा में वल्लभ-वियोग से दुःखानुभव जान अति घोर
अब भी रस से उमड़ी नदियाँ बढ़ती हैं नदीश की ओर
पिक, चातक, मयूर हैं अब भी सुख से करते सुन्दर गान
घन-स्निग्ध-गम्भीर घोष की मानों वे भरते हैं तान

फिर क्यों हुआ भाव-परिवर्तन एक हमीं में यह ऐसा ?
जो मन कञ्ज-सदृश कोमल था हुआ वही पत्थर-जैसा ।
हृदय-हीन कर दो अब हमको, यही हमारा है उपचार
करो न वार, मान लो कहना, करो, करो, इतना उपकार

१९१८

खुला द्वार

नलिनी-मधुर-गन्ध से भीना पवन तुम्हें थपकी देकर
पैर बढ़ाने को उत्तेजित वार-बार करता प्रियवर !
उधर पपीहा बोल बोल कर तुमसे करता है परिहास—
पहुँच द्वार तक, अब क्यों आगे किया न जाता पद-विन्यास?
यद्यपि चन्द्र, तुम्हारा आनन देख विलज्जित हुआ नितान्त,
छिपता-फिरता है, वह देखो, घने-घने वृक्षों में कान्त !
पर, डालों के जालरन्ध्र से फिर भी उझक-उझक जैसे
झाँक रहा है अहो ! तुम्हारा आना, रुक जाना ऐसे
आये हो कुछ यहाँ नहीं तुम पथ को भूल भ्रमित होकर
यहाँ पहुँचने ही को केवल अहो चले थे तुम प्रियवर !
धूल-धूसरित चरणों का क्या है विचार ?—तो है यह भूल
जगतीतल में और कहाँ मिल सकती मुझे स्नेहमय धूल ?
पद-स्पर्श से पुण्य-धूलि वह सीस चढ़ावेगी चेरी
प्रेम-योगिनी होने में बस, होगी वह विभूति मेरी
फिर इतना सङ्कोच व्यर्थ क्यों ? बतलाओ जीवन-अवलम्ब !
खुला द्वार है, भीतर आओ, मानो कहा, करो न विलम्ब

१९१३

कठोर करुणा

चिर निद्रा में इस नलिनी को सोने दो हाँ, सोने दो
सुधा-वृष्टि से हिमकर ! इसकी शान्ति भङ्ग मत होने दो
रो-रो कर सब जनम विताया अब तो और न रोने दो
जगा न दो निज अमृत करों से सारी सुध-बुध खोने दो
व्यथित नयन सम्पुटित हुए हैं टुक विश्रान्ति मिली है आज
मत खोलो, मत खोलो उनको, यह विनती मानो द्विजराज !

१९२४

उत्का

स्मरण अब तेरा
प्रिय रमण आया
विधु-वदन दिखला तू
व्यथित मन मेरा
तुम्ही में छाया
प्रणय से मिल जा तू

चंद्र की खेला
प्रभा का मेला
पवन का इठलाना
विपिन की हेला
नितान्त अकेला
पपीहे का गाना

शरद की रातें
स्फुट कुमुद-पाँतें
हाय, वन काल रहीं
तव मधुर बातें
प्रेम की घातें
हृदय को साल रहीं

शीघ्र अब आ तू
अधिक न सता तू
दुःख क्या सहे नहीं
हृदय लग जा तू
मुझे हुलसा तू
द्वैतता रहे नहीं

१७

पुतलियाँ

असित हसित हैं, गम्भीर स्निग्ध, शान्त हैं,
विमल, प्रशस्त, भव्य, कोमल हैं, कान्त हैं,
शारदीय सुन्दर अनन्त[1] छबि वाली हैं,
आँखों की पुतलियाँ तुम्हारी ये निराली हैं।

थाह लेना चाहता कपोत ज्यों गगन की,
मन मे ही किन्तु रह जाती चाह मन की,
त्योंही उनकी मैं व्यर्थ थाह लेना चाहता,
मानों पूर्ण पारावार को हूँ अवगाहता।

उर पर बिठाता है शिखर घटा को ज्यो,
प्राणों पर रखता हूँ उनकी छटा को त्यों।
कोकिल विलोकता है जैसे ऋतुराज को,
साधता उसी से है खकण्ठ-स्वर-साज को,
वैसे ही असंख्य भाव मन मे मैं भर के,
होता रहूँ हर्षित उन्हीं को देख कर के।

1—आकाश

१९१७

आग्रह

हंस, हंस, इस शुचि मानस में
सत्वर आकर कर तू वास
जिन पर मत्त भृंग भूले हैं
कैसे यहाँ कमल फूले हैं
कोमल कवल उन्हीं का करके
होने दे लावण्य-विकास।

अपनी उज्वल छवि फैला दे
इसमे नई सरसता ला दे
इसकी नवल लहरियो पर अब
प्रेम-सहित कर विविध विलास

वे तेरे सुपर्ण चूमेंगी
आनन्दित होकर झूमेंगीं
कमल वनों को कम्पित करके
दिखलावेंगी निज उल्लास।

रुचि-पराग की धूल उड़ेगी
भ्रमर-गीत रस रीति जुड़ेगी
प्रतिविम्बित तरु शतधा होकर
कैसा रुचिर रचेंगे रास।

वेणु की बिनती

भृंग, गुञ्जरित भृंग, तनिक यह मेरी बिनती कान धरो
बस तुम मेरा हृदय बेध दो फिर गुनगुन गुन गान करो

यह क्या कहा क्रूरता होगी, नहीं, अतीव दया होगी
छिद्र-पूर्ण होने पर भी मैं हूँगा दुर्लभ सुख-भोगी
उन रंध्रों में वह मारुत वह प्रियतम का निःश्वास भरे
स्वर से मेरे शून्य हृदय की व्यथा कथा, जो व्यक्त करे
धारण किये हुए मैं जिसको मर्मर करके मरता हूँ
ध्यान नहीं देता कोई भी लाख यत्न मैं करता हूँ

तुम मधुकर हो दया-मया कर मुझको यह मधु दान करो
भृंग, गुञ्जरित भृंग, तनिक यह मेरी बिनती कान धरो।

१९२४

वसंतोत्सव

कोयल करती आनन्द-गान, आया रसाल सज सुभग मौर

खिल उठीं देख कर सुमन-डाल
रचता मधूक है विजय-माल
सज गई प्रकृति की सिंह-पौर
कोयल करती आनन्द-गान, आया रसाल सज सुभग मौर

अधर-प्रवाल को चूम-चूम
प्रेमामृत पीकर भूम-भूम
बन गया और का पवन और
कोयल करती आनन्द-गान, आया रसाल सज सुभग मौर

पाकर उसका सौरभ अनंत
ऋतुपति होता है वर वसंत
उत्सव होता है ठौर-ठौर
कोयल करती आनंद-गान, आया रसाल सज सुभग मौर

३१७

विकलता

तड़प उठी कोयल की जान
हृदय-वेदना का यह क्रन्दन, अरे कहाँ का गान
बोलो बोलो, किसका, किसका आया उसको ध्यान?
खोज रही है आज किसे वह; किसमें अटके प्राण?

१९२५

माला

आज कण्ठ में तेरे प्रियतम, कैसी माला पहनाऊँ
तव स्पर्श से उसे धन्य कर निरख-निरख के सुख पाऊँ
चाहे सौरभ हो सुमनों मे किंतु मनोहर हाव कहाँ
रूप भले ही नयन सुखद हों पर उनमे है भाव कहाँ
हाँ, जब कुसुम कठोर कठिन हैं, तब मुक्ता तो है पाषाण
जो वर्तुलता-वश अपनी ही खनि का नाश कराती आप
तब तो तुझे अश्रु की माला पहनाऊँगी मैं प्यारे!
जिसके एक-एक दाने में मेरे भाव भरे सारे
तेरी छाती से लग कर जो मेरी व्यथा सुनावेगी
पैठ जायगी तव मानस मे, तुझमें मुझे मिलावेगी

१२३

परमपद

शूल-विद्ध कर हृदय-कुसुम को एक तन्तु मे पिरो दिया
बहु सुमनों के साथ; आज प्रिय, इसको भी सामान्य किया
जिसमे कण्ठ-हार यह तेरा अनायास ही बन जावे
तेरे वक्ष बीच बसने के सुख से फूला लहरावे
नहीं दुःख इसने माना कुछ, वृन्त-दोल से जो टूटा
आलबाल से, लता-जाल से, हाय! सहज नाता छूटा
प्रिय! परन्तु पददलित कर दिया, तूने इसे नहीं पहना
रहा कहीं का नहीं हहा यह बना न जो तेरा गहना
किंतु, नहीं, यह अहोभाग्य है, जो यह चरणों मे आया
तेरे पदस्पर्श से इसने सहज परम-पद है पाया।

१९२४

समर्थन

खूब किया जो तुमने इसको ला पिंजड़े में बन्द किया
चारा चुँगने को बेचारा
दर-दर फिरता मारा-मारा
दूध-भात बैठा खाता है, आहा क्या आनन्द दिया

तरु-कोटर-वासी निरीह को स्वर्णासन आसीन किया
वन-विहंग को सुजन बनाया
खग को नर-भाषण सिखलाया
राम-नाम का मज़ा चखा के अमर किया स्वाधीन किया

१९२२

स्वर-लिपि

तालिका

स्वर-लिपि के संकेत-चिन्हों का ब्योरा

१—जिन स्वरों के नीचे बिन्दु हो, वे मंद्र सप्तक के, जिनमें कोई बिन्दु न हो वे मध्य सप्तक के तथा जिनके ऊपर बिन्दु हो वे तार सप्तक के हैं। जैसे—स़, स, सं।

२—जिन स्वरों के नीचे लकीर हो वे कोमल हैं। जैसे रे̱, ग̱, ध̱, नि̱। जिनमें कोई चिन्ह न हो वे शुद्ध हैं। जैसे—रे, ग, ध, नि। तीव्र मध्यम के ऊपर खड़ी पाई रहती है—म॑।

३—आलंकारिक स्वर (गमक) प्रधान स्वर के ऊपर दिया

        ध   म
है; यथा—प म प

४—जिस स्वर के आगे बेड़ी पाई हो '–' उसे उतनी मात्रा तक दीर्घ करना जितनी पाइयाँ हों । जैसे, स–,रे––,ग–––, ।

५—जिस अक्षर के आगे जितने अवग्रह ऽ हों उसे उतनी मात्रा तक दीर्घ करना । जैसे रा ऽ म , सखी ऽऽ , आ ऽऽऽ ज ।

६—'◡' इस चिन्ह में जितने स्वर या बोल रहें, वे एक मात्रा काल में गाए या बजाए जायँगे । जैसे—सरे, गम ।

७—जिस स्वर के ऊपर से किसी दूसरे स्वर तक चन्द्राकार लकीर जाय, वहाँ से वहाँ तक मींड समझना । जैसे,

स––म, रे––प, इत्यादि ।

८—सम का चिन्ह ×, ताल के लिये अंक और खाली का द्योतक ० है। इनका विभाजन खड़ी लम्बी रेखाओं से दिखाया गया है।

९—'❀' यह विश्रांति का चिन्ह है । ऐसे जै चिन्ह हो तै मात्रा काल तक विश्रान्ति जानना ।

स्वेच्छाचार

दरबारी कान्हरा—तीन ताल

स्थायी

	×	२	०	३
		म		
1		पम प ग॒ –	रे स रे –	नि॒ स रे स
		मेऽ ऽ री ऽ	इ ऽ च्छा ऽ	प र म त
		नि॒		
2	ध॒ नि॒ प –	म प ध॒ –	नि॒ – स –	रे –पम प
	ओ ऽ हो ऽ	तु म हे ऽ	मा ऽ ला ऽ	का ऽ रऽ मु
	म	नि॒	स	नि॒
3	ग॒ – – –	रे – स –	नि॒ – स रे	ध॒ – नि॒ स
	मे ऽ ऽ ऽ,	आ ऽ ओ ऽ	औ ऽ र ब	ना ऽ ओ ऽ
				म
4	प प म –	मप धनि॒ स –	रेस रे पम प	ग॒ – ग॒ म
	अ प नी ऽ	इऽ ऽऽ च्छा ऽ	केऽ ऽ अऽ नु	सा ऽ र मु
5	रे – स –			
	मे ऽ ऽ ऽ			

पहिला अन्तरा

×	२	०	३
	म — प ध़	— ध़ नि़ —	सं सं सं नि़ सं
	का ऽ ट छाँ	ऽ ट या ऽ	क त र ब्यों ऽ
रें नि़ सं —	नि़ सं रें —	रें — मं पं	(मं) गं — गं मं
ऽ त से ऽ	मि ल ता ऽ	है ऽ अ ति	क ऽ ष्ट मु
रें — सं —	नि़ — सं रें	(नि़) ध़ — नि़ सं	प — प सं
झे ऽ ऽ ऽ,	हो ऽ ता ऽ	है ऽ सं ऽ	दे ऽ ह सा
ध़ नि़ प —	म प नि़ —	ग़ — ग़ म	रे — रे रे
ऽ थ ही ऽ	क र ते ऽ	हौ ऽ तु म	न ऽ ष्ट मु
रे — स —			
झे ऽ ऽ ऽ,			

(दूसरा अन्तरा इसी प्रकार)

तीसरा अन्तरा

X	२	०	३
	म म प प	धु धु नि प	(प)सं – सं सं
X	अ म व श	नि ऽ में म	हा ऽ य तु
निसंरें धुनिप	म प नि –	ग — म प	(म)ग – म प
म्हाऽऽराऽऽ	ल ग ता ऽ	है ऽ व्य व	हा ऽ र मु
रे — स —	प म प (म)ग –	रे स रे –	नि स रे स
झे ऽ ऽ ऽ ,	मे ऽ ऽ री ऽ	इ ऽ च्छा ऽ	प र म त
धु नि प —	म प (नि)धु –	नि — स –	रे – प म प
छो ऽ ड़ो ऽ	तु म हे ऽ	मा ऽ ला ऽ	काऽ र ऽ मु
(म)ग — — —			
झे ऽ ऽ ऽ			

उद्बोधन

मुलतानी—तीन ताल

स्थायी

		स	३
×		नि़	स ग — मं
मं	२	० हे	ऽ रा ऽ ज
प — प ग	मं प ध प	मं ग रे स	
हं ऽ स य	ह कौ ऽ न	चा ऽ ल ऽ,	

पहिला अन्तरा

			प — ग मं
			तू ऽ पि ऽ
प ध मं —	मं सं ध सं	नि ध प —	प प प —
अ र व ऽ	द्ध च ला ऽ	हो ऽ ने ऽ,	व न ने ऽ
ग मं प ध	प मं ग प	मं ग रे स	नि़ स ग — मं
अ प ना ऽ	ही ऽ आ ऽ	प का ऽ ल,	हे ऽ रा ऽ ज

दूसरा अन्तरा

×	२	०	३
			म॑ ध सं –
			य ह है ऽ
सं – सं सं	सं – ध सं	नि ध प –	प – ग म॑
कं ऽ च न	का ऽ ब ना	ऽ हु आ ऽ,	तू ऽ इ स
प – गम॑ पध	प म॑ ग प	म॑ ग रे स	प प ग म॑
से ऽ मोऽ ऽऽ	हि त म ना	ऽ हु आ ऽ,	क न का ऽ
प ध सं सं	सं – ध सं	नि ध प –	प प प –
न्न प्र स वि	मा ऽ न स	भी ऽ है ऽ,	उ स को ऽ
ग म॑ प ध	प म॑ ग प	म॑ ग रे स	निस ग – म॑
वि ऽ स्मृ त	म त क र	म रा ऽ ल,	हेऽ रा ऽ न

(शेष अन्तरे दूसरे अन्तरे की तरह)

अहोभाग्य

पूरबी–तीन ताल

स्थायी

×	२ म॑	०	३
	नि़ रे॒ ग म॑ प प	म॑ ध॒ प म॑ ग म ग	नि़ रे॒ ग म॑ ग रे॒
×	क्याऽऽऽ यह	न्योऽऽऽताऽऽ	तेऽऽऽराऽ
नि़ स – – –	नि़ रे॒ स नि़	रे॒ ग म॑ प	म॑ ध॒ प म॑ ग म
है ऽ ऽ ऽ,	प्रे ऽ म नि	मं ऽ त्र ण	मेऽऽऽराऽ
ग रे॒ स –	प प म॑ ध॒	प म॑ ग म	ग रे॒ ग म
है ऽ ऽ ऽ,	इ स की ऽ	अ व हे ऽ	लाऽ क्याऽ
ग रे॒ स –	नि़ रे॒ ग म॑ प प	म॑ ध॒ प म॑ ग म ग	रे॒ ग म ग
मु झ से ऽ,	होऽऽऽ सक	तीऽऽऽहैऽऽ	भ ला ऽ क
रे॒ नि़ स –			
भी ऽ ऽ ऽ,			

अन्तरा

X	२	०	३
	मंधु निसं रेनिसं	संसं निरें गंरें	सं सं नि धु
	गाऽ ऽऽ ओऽऽ	स ब मंऽ ऽऽ	ग ल गा ऽ
प – – –	मं धु प मं	ग म ग –	रे ग म ग
ओ ऽ ऽ ऽ,	सु म ना ऽ	ञ्ज लि याँ ऽ	ब र सा ऽ
रें नि़ स –	नि़ रे ग मं	प धु मं प	धु सं नि रें
ओ ऽ ऽ ऽ,	य ह अ ति	मे ऽ रा ऽ	अ हो ऽ भा
सं नि धु प	मं धु प मं	ग म ग –	रे ग म ग
ऽ ग्य है ऽ,	हु ई ऽ ना	ऽ थ की ऽ	कृ पा ऽ त
रें – स –			
भी ऽ ऽ ऽ,			

(शेष अन्तरे इसी प्रकार)

पुकार

विहारी—तीन ताल

स्थायी

×	२	०	३
		रे ध प म	ग स रे ग
		क हो ऽ क	हाँ ऽ छा ऽ
स – स –	रे ग स रे		
ये ऽ हो ऽ	तु म घ न,		

अन्तरा

×				२				०				३			
								रे	नि	ध	नि	प	ध	म	प
								आ	ऽ	ओ	ऽ	आ	ऽ	ई	ह
ग	म	रे	ग	स	रे	ग	स	स	रे	स	नि़	ध़	प़	प़	प़
द	य	ब	न	आ	ऽ	ओ	ऽ,	चा	ऽ	त	क	पं	र	कु	छ
ध़	स	–	स	रे	ग	स	रे	म	म	प	–	नि	–	सं	सं
द	या	ऽ	दि	खा	ऽ	ओ	ऽ,	उ	स	की	ऽ	दा	ऽ	रु	ण
सं	रें	गं	सं	रें	गं	सं	–	सं	रें	सं	नि	ध	प	म	ग
तृ	षा	ऽ	बु	झा	ऽ	ओ	ऽ,	व	ह	स	है	ऽ	व	है	ऽ
प	ध	प	म	ग	रे	स	रे								
त	व	अ	न	ऽ	न्य	ज	न,								

(शेष अन्तरे इसी प्रकार)

उत्का

राग-मण्डल

(इसमें ताल का उपयोग नहीं है, मध्य लय में गाया जायगा)

नि ध
सं नि प नि ध नि सं नि प ध ग
स्म र ण अ ऽ ब ते ऽ रा ऽ ऽ,

मं मं मं
प प ग ग प ग — स — — —
प्रि य र म ण आ ऽ या ऽ ऽ ऽ,

स म म म म प प नि ध सं नि — ।
बि धु व द न दि ख ला ऽ ऽ तू ऽ ।

ध मं
प ग प नि ध सं नि प — सं —
व्य थि त म ऽ ऽ न मे ऽ रा ऽ,

ध
नि प म ग — म ग नि़ स —
तु झी ऽ में ऽ ऽ छा ऽ या ऽ,

नि़ प़ नि़ स ग म प नि प म ग — — — ॥
प्र ण य से ऽ ऽ मि ल जा ऽ तू ऽ ऽ ऽ ॥

ग म प नि — सं — सं — —
च ऽ न्द्र की ऽ खे ऽ ला ऽ ऽ

रें ध
सं गं मं गं सं नि प मं म ग —
प्र भा ऽ का ऽ ऽ मे ऽ ऽ ला ऽ,

ग म प मं म ग ग म ग नि़ स — ।
प व न का ऽ ऽ इ ठ ला ऽ ना ऽ ।

प ध नि॒ ध प मं ग म ग — — —
वि पि न की ऽ ऽ हे ऽ ला ऽ ऽ ऽ,

प ध नि॒ ध प मं ग म ग —
नि ता ऽ ऽ न्त अ के ऽ ला ऽ,

ग नि़ स ग म प – नि – सं – – – ॥
प पी ऽ हे ऽ का ऽ गा ऽ ना ऽ ऽ ऽ ॥

स्मरण अब तेरा—

म ग म प ध नि — सं — —
श र द् की ऽ रा ऽ तें ऽ ऽ,

सं रें सं नि ध म — ग म —
स्फु ट कु मु द पाँ ऽ तें ऽ ऽ,

स — ग स ग म प ध नि ध - - - ।
हा ऽ य ब न का ऽ ल र हीं ऽ ऽ ऽ ।

रें ध मं
सं नि प ग प ग — स — —
त व म धु र बा ऽ तें ऽ ऽ,

ग म प ध नि ध — ध — —
प्रे ऽ म की ऽ घा ऽ तें ऽ ऽ,

सं नि सं गं मं गं रें सं नि सं - - - ॥
हृ द य को ऽ सा ऽ ल र हीं ऽ ऽ ऽ ॥

स्मरण अब तेरा—

नि — सं नि प म — ग — —
शी ऽ घ्र अ ब आ ऽ तू ऽ ऽ,

ग म प नि प म — ग — —
अ धि क न स ता ऽ तू ऽ ऽ,

स ग म प – ग म प नि सं – – – ।
दुः ऽ ख क्या ऽ स हे ऽ न हीं ऽ ऽ ऽ ।

गं रें गं सं रें नि — सं — —
हृ द य ल ग ना ऽ तू ऽ ऽ,

नि ध नि प ध प — प — —
मु झे ऽ हु ल सा ऽ तू ऽ ऽ,

ग – म प – ग म रे ग रे – – – ॥
द्वै ऽ त ता ऽ र है ऽ न हीं ऽ ऽ ऽ ॥

सरण अब तेरा—

आग्रह

भैरव—तीन ताल

स्थायी

×				२				०				३			
ध़्	–	नि़	स	–	स	नि़	स	रे	ग	रे ग	म प	म	ग	रे	स
हं	ऽ	स	हं	ऽ	स	इ	स	शु	चि	मा ऽ	ऽ ऽ	न	स	में	ऽ
स	ध	प	ध	म	प	ग	म	रें	ग	म	–	रे	–	–	स
स	ऽ	त्व	र	आ	ऽ	क	र	क	र	तू	ऽ	वा	ऽ	ऽ	स

अन्तरा

X				२				०				३			
ग	म	प	प	ध॒	–	ध॒	नि	–	नि	सं	–	सं	–	सं	–
नि	न	प	र	म	ऽ	त्त	भृं	ऽ	ग	भू	ऽ	ले	ऽ	हैं	ऽ
ध॒	–	नि	–	सं	सं	–	सं	रें॒	गं	मं	–	रें॒	–	सं	–
कै	ऽ	से	ऽ	य	हां	ऽ	क	म	ल	फू	ऽ	ले	ऽ	हैं	ऽ
सं	रें॒	सं	रें॒	सं	नि	ध॒	प	म	ग	म	–	रे॒	रे॒	स	–
को	ऽ	म	ल	क	व	ल	छ	न्हीं	ऽ	का	ऽ	क	र	के	ऽ
नि़	स	ग	म	ध॒	–	प	–	म	–	ग	म	रे॒	–	–	स
हो	ऽ	ने	ऽ	दे	ऽ	ला	ऽ	वि	ऽ	एय	वि	का	ऽ	ऽ	स

(शेष अन्तरे इसी प्रकार)

वसन्तोत्सव

बहार—तीन ताल

स्थायी

	२	०	३
	नि सं रें सं	नि प म प	नि प म प ग म
	को ऽ ऽ ऽ	य ल क र	ती ऽ ऽ ऽ आ ऽ
X	२		
ध – ध नि	सं सं नि सं	नि प म प	ग म रे स
न ऽ न्द गा	ऽ न आ ऽ	या ऽ र सा	ऽ ल स ज
स म प ग	– म		
सु भ ग मो	ऽ र		

अन्तरा

X				२				०				३			
						म	म	म	प	–	म	–	प	ग	म
						खि	ल	उ	ठी	ऽ	दे	ऽ	ख	क	र
म	ध	ध	नि	सं	सं	नि	सं	रें	–	रें	रें	–	रें	नि	सं
सु	म	न	डा	ऽ	ल,	र	च	ता	ऽ	म	धू	ऽ	क	है	ऽ
सं	रें	सं	नि	–	प	म	प	ग	म	रे	रे	स	स	स	–
वि	ज	य	मा	ऽ	ल,	स	ज	ग	ई	ऽ	प्र	कृ	ति	की	ऽ
म	प	ग	म	प	ऽ										
सिं	ऽ	ह	पौ	ऽ	र										

(शेष अन्तरे इसी प्रकार)

विकलता

बागेश्वरी—तीन ताल

स्थायी

			३
			ध नि ध प ध
×	२	०	तड़ प ऽ ढ
	प		
नि – ध –	म म म प ध प	ग रे ग रे स	स नि ध नि
ठी ऽ को ऽ	य ल की ऽ ऽ ऽ	जा ऽ ऽ ऽ न,	हृ द य वे
		म	स
स स म –	म ध ध नि	ध म ग रे स	रे नि ध नि
ऽ द ना ऽ	का ऽ य हृ	क्र ऽ न्द नऽ	भ्र रे ऽ क
	प	म	
स म ध नि	सं नि ध म	ग रे – स	
हाँ ऽ का ऽ	गा ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ न,	

अन्तरा

X	२	०	३
			म – ध नि॒ध
			वो ऽ लो ऽऽ
सं – सं –	ध नि॒ सं ग॒ं	रें सं नि॒ ध	म – नि॒ ध
वो ऽ लो ऽ	कि स का ऽ	कि स का ऽ	आ ऽ या ऽ
सं सं सं –	नि॒ ध म ध	नि॒ ध ^म^ग॒ रेस	स ऩि॒ ध़ ऩि॒
ह स को ऽ	ध्या ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽन,	खो ऽ ज र
स म म –	ग॒म धनि॒ संसं	नि॒ ध ध ध	म ध नि॒ –
ही ऽ है ऽ	आऽ ऽऽ जकि	से ऽ व ह	कि स में ऽ
ध ^प^म ग॒ रे	स नि॒ ध॒ नि॒	स म ग॒ रेस	
अ ट के ऽ	आ ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ णऽ	

समर्थन

मालकोस—तीन ताल

स्थायी

×	२	०	३
निध नि म ग	म स स –	नि स ध नि	नि स धनि स म
खूऽ ऽ ब कि	या ऽ जो ऽ	तु म ने ऽ	इ स कोऽ ऽऽ
ग म धम ध	नि सं सं –	निसं निगं सं नि	धनि धनि म –
जाऽ ऽ पिंऽ ज	ढ़े ऽ में ऽ	बऽ ऽऽ न्द्र कि	याऽ ऽऽ ऽऽ

पहिला अन्तरा

×	२	०	३
म – म –	ग म स –	नि स ध नि	स – म –
चा ऽ रा ऽ	चु ग ने ऽ	को ऽ बे ऽ	चा ऽ रा ऽ
स स स स	ग म स –	ध – नि –	ध – म –
द र द र	फि र ता ऽ	मा ऽ रा ऽ	मा ऽ रा ऽ
स म म म	–म गम गम	म – ग म	ध निध निसं
दू ऽ ध भा	ऽ त बै ऽ ऽ ऽ	ठा ऽ खा ऽ	ता ऽ है ऽ ऽ
मं – मं –	सं – सं –	निसं नीगं संनि	ध निध निम–
आ ऽ हा ऽ	क्या ऽ आ ऽ	नं ऽ ऽ ऽ द दि	या ऽ ऽ ऽ ऽऽ
मध निस निस	म – – ❀	स स म –	म म ग ग
खूऽ ऽऽ ब कि	या ऽ ऽ ❀	त रु को ऽ	ट र वा ऽ
म – सं सं	– सं सं –	गं सं नि –	ध ध.म ध निसं
सी ऽ नि री	ऽ ह को ऽ	स्व ऽ र्णा ऽ	स न आ ऽ ऽ ऽ
संगं संनि संनि	धनि धनि म–	मध निस निस	म – – ❀
सीऽ ऽऽ न कि	याऽ ऽऽ ऽऽ,	खूऽ ऽऽ ब कि	या ऽ ऽ ❀

दूसरा अन्तरा

×				२				०				३			
म	म	ग	म	–	स	नि	स	गम	सग	निस	धनि	धनि	स	म	–
ब	न	वि	हं	ऽ	ग	को	ऽ	सुऽ	जऽ	नऽ	बऽ	नाऽ	ऽ	या	ऽ
स	स	स	–	ध	नि	स	–	ध	ध	सग	निस	ध	नि	म	–
ख	ग	को	ऽ	न	र	भा	ऽ	ष	ण	सिऽ	खऽ	ला	ऽ	या	–
सं	–	सं	म	–	म	ग	म	ग	म	ध	म	ध	नि	ध	नि
रा	ऽ	म	ना	ऽ	म	का	ऽ	म	ना	ऽ	च	खा	ऽ	के	ऽ
सं	सं	सं	सं	सं	–	निसं	निगं	सं	–	सं	नि	धनि	धनि	म	–
अ	म	र	कि	या	ऽ	स्वाऽ	ऽऽ	धी	ऽ	न	कि	याऽ	ऽऽ	ऽ	ऽ
मध	निस	नि	स	म	–	–	–	निस	गम	ध	नि	सं	–	–	❀
खूऽ	ऽऽ	ब	कि	या	ऽ	ऽ	ऽ	खूऽ	ऽऽ	ब	कि	या	ऽ	ऽ	❀